चौथा अध्याय

रहीम का नीतिकाव्य - सामान्य परिचय

अध्याय चौथा :

रहीम का नीतिकाव्य - सामान्य परिचय

हिन्दी साहित्य के मध्यकाल में ही नहीं अपितु समग्र हिन्दी - जगत् में, रहीमेतर ऐसा कोई अन्य व्यक्तित्व उत्पन्न नहीं हुआ जो सफल सेनापति, उत्कृष्ट प्रशासनाधिकारी, रससिध्द कवि आदि सभी कुछ एक साथ हो। सच तो यह है कि विविध भाषा - ज्ञान, उदार काव्याश्रय तथा मुक्तहस्त दान में, वे अपने युग कि सार्वभौमिक विभूति थे। उनके पास जो काव्यकला थी उसका उपयोग उन्होंने स्वान्त: सुखाय तक ही सीमित न रखकर जनजीवन की सामूहिक चेतना को प्रबुद्ध करने में किया।

रहीम को वास्तविक कवि - हृदय प्राप्त था। उनका नीति - काव्य सरल कल्पनाओं का और अनुभवों का भंडार है। जैसे -

रहिमन अपने गोत को, सबै चहत उत्साह।
मृग उछरत आकास कों, भूमि खनत बराह।।[१]

यहाँ रहीम ने जमीन - असमान को एक कर दिया है। मृग ऊँचे इसलिए उछलते हैं कि उनके गोत्र के प्राणी आकाश में हैं और बराह अपने मुख से भूमि इसलिए कुरेदता है कि बराह अवतार में विष्णु भगवान ने पृथ्वी को पाताल समेत अपने मुख से उठा लिया था। अपने दोहे द्वारा ऐसे विचार व्यक्त करना रहीम की बुध्दि का कमाल है।

रहीम को उनके जीवन में जितना सुख, सम्मान मिला उतना ही जीवन के अंतिम दिनों में अनेक संकटों का सामना करना पडा। तब उन्हें वास्तविक जीवन का परिचय हुआ। अपने जीवन की गहरी संवेदना और विशाल अनुभवों को नीति कथनों द्वारा रहीम ने व्यक्त किया है।

नीति का अर्थ एवं महत्व :

नीति के कल्याणकारी एवं व्यावहारिक विषय को लेकर लिखा गया काव्य नीति - काव्य कहलाता है। संस्कृत में "नय" और "नीति" शब्द एक ही अर्थ में प्रयुक्त होते हैं। नीति में वे सिध्दान्त सम्मिलित रहते हैं जिन पर चलते समय मनुष्य दूसरों का अहित किए बिना हितसाधन कर लेता है। सिर्फ सौन्दर्य, कल्पना, मनोरंजन को लेकर लिखा गया काव्य उतना उपादेय नहीं हो सकता, जितना नीति - काव्य होता है। नीति - काव्य में विचारों का प्राबल्य अधिक होता है। इसके साथ ही उसकी अनुभूति जितनी मार्मिक और कल्पना जितनी सूक्ष्म होगी उसका प्रभाव उतना ही अधिक होता है। इसलिए काव्य रचना करते समय नीति को अधिक महत्त्व होता है।

रहीम का काव्य अपनी अनुभूति की मार्मिकता व्यक्त करता है। साथ ही उनके काव्य में भावों की मिठास, कल्पना की रंगीनी और विचारों की त्रिवेणी का संगम हुआ है। रहीम का नीति - काव्य जानने के लिए नीति के प्रकारों की जानकारी लेना आवश्यक है।

धर्मनीति :

नीति - काव्य और धर्म का संबंध घनिष्ट है। परंतु नीति में धर्म अपने बाहय रूप अर्थात पूजा - पाठ, नमाज, तीर्थ, व्रतादि के रूप में न आकर कर्तव्य के रूप में आता है। रहीम धर्मनिरपेक्ष प्रकृति के थे। वैसे उनके काव्य में रामकृष्णादि की भक्ति - विषयक कथन मिलते हैं, लेकिन धर्म के नाम पर रहीम ने कुछ नहीं लिखा। इसीलिए उनके काव्य में धर्म शब्द का प्रयोग अत्यंत सीमित है, जैसे -

रहिमन विद्या बुध्दि नहीं, नहीं धरम जस दान।
भूपर जनम वृथा धरैं, पसु बिन पूँछ विषान।।[२]

MHR. BALASAHEB KHARDEKAR LIBRARY
SHIVAJI UNIVERSITY, KOLHAPUR

वस्तुत: रहीम की धर्मनीति कर्तव्य - परायणता की नीति है। वे इसी अर्थ में धर्मपरायण थे। सामान्य प्रचलित अर्थ में धर्मोपदेशक नहीं। फिर भी रहीम ने आपत् धर्म की चर्चा करते हुए अपनी रक्षा के लिए प्रत्येक संभव उपाय काम में लाने की सम्मति दी है। वैयक्तिक धर्म नीति की दृष्टि से उन्होंने सुख - दु:ख में समभाव धारण करने की, छोटों को क्षमा करने की, बन्धु-बान्धवों से प्रेमभाव बनाये रखने की, थोडे जीवन के लिए मुँह काला न करने की, सामाजिक दृष्टि से दान करने की, परोपकारमय जीवन बिताने की नीति पर बल दिया है।

अर्थनीति :

भारत हमेशा धर्म - प्रधान देश रहा है। धर्म रहित अर्थ को, भारत ने कभी महत्व नहीं दिया है। रहीम धनसंपत्ति के विरोधी नहीं थे, लेकिन वे अधर्म के मार्ग से प्राप्त किए हुए धन के विरोधी थे। उन्हें मालूम था ऐसा धन कभी टिकता नहीं। ऐसा धन स्वयं चला जाता है, साथ में अन्य हितों का भी नाश करता है। वस्तुत: रहीम मानते थे कि धन का महत्व साधन के रूप में है, साध्य के रूप में नहीं।

जब व्यक्ति के पास धन नहीं होता है तब विपत्ति में भी कोई मदद नहीं करता। जैसे -

रहिमन निज सम्पत्ति बिना, कोउ न विपति सहाय।
बिनु पानी को जलज को, नहिं रवि सकै बचाय।।[3]

उपर्युक्त दोहे में रहीम कहते हैं कि, " जिस तालाब में कमल के फूल हैं, परंतु पानी नहीं तो कमल के फूलों को सूरज भी नहीं बचा सकता वैसे आदमी पर संकट आ जाय, तो उसकी संपत्ति ही उसकी रक्षा करती है, मदद करती है।"

अत: धर्म और सम्मानपूर्वक धन को प्राप्त करते हुए, विपत्ति काल के लिए उसका संरक्षण ही रहीम की अर्थ-नीति है। दान करना उनकी अर्थनीति का अनिवार्य अंग है।

काम - नीति :

जिस प्रकार अर्थ को धर्म के अधीन माना गया है, उसी प्रकार काम को धर्म और अर्थ दोनों के अधीन माना गया है। अत: अर्थ एवं धर्मयुक्त काम काम्य है। जीवन में धर्म, अर्थ के समान काम को भी महत्त्व है। परंतु मध्ययुगीन वातावरण में सभी संतों - भक्तों ने काम और कामिनी की निन्दा की है। लेकिन रहीम इसके विरोधी थे। रहीम ने अपने काव्य में कहीं भी काम और कामिनी की निन्दा नहीं की है। परंतु कई रचनाओं में रहीम ने सुंदर श्रृंगारिक चित्रण किया है उदा-

मनसिज माली की उपज, कही रहीम नहिं जाय।
फल श्यामा के उर लगे, फूल श्याम उर आय।।[४]

इस दोहे में रहीम ने कामदेव रूपी माली का वर्णन किया है। फूल श्याम के हृदय में उपजते हैं मतलब काम का आनंद श्याम के हृदय में निर्माण होता है और फल श्यामा के हृदय पर लगता है अर्थात् श्यामा के उरोज का वर्णन है।

इतना ही नहीं, रहीम ने कामातुर का उल्लेख अन्य कवियों के समान ढोल - गँवार, बाघिनी, सर्पिणी मात्र के साथ न करके राजा के साथ किया है। जैसे -

उरग, तुरंग, नारी, नृपति, नीच जाति, हथियार।
रहिमन इन्हें सँभारिए, पलटत लगै न बार।।[५]

उपर्युक्त दोहे में रहीम ने कहा है - "सर्प, घोडा, स्त्री, राजा, नीच कुल के मनुष्य और हाथियार को सदा संभाल कर रखना चाहिये क्यों कि थोडी सी ढील देने पर इन्हें पलटते देर नहीं लगती।"

दूसरी महत्त्वपूर्ण बात यह कि संस्कृत के कवियों ने जैसे नारी और कामासक्ति के अतिरंजित वर्णन किए हैं, वैसे रहीम ने नहीं किए हैं। रहीम के काव्य में नारी

का असम्मान नहीं है। पुरुष और स्त्रियों को कामातुरता के प्रति सावधान रहकर मर्यादा के अनुकूल कामेच्छा पूर्ण करनी चाहिए, रहीम कामनीति द्वारा यही व्यक्त करना चाहते हैं।

मोक्षनीति :

भारत आध्यात्मिकता प्रधान देश है। विभिन्न ऋषियों, आचार्यों, धर्मानुयायियों तथा मठसंस्थापकों ने अपने - अपने विचारों के अनुसार मोक्ष की विभिन्न व्याख्याएँ की हैं। भारत की विशेषता है कि विभिन्नता में एकता की खोज। परंतु रहीम मोक्ष-व्याख्याता नहीं थे। रहीम इस्लाम धर्म के होने के कारण उनकी भिन्न मान्यताएँ होना स्वाभाविक है। उन्होंने अपने द्वारा मोक्ष-नीति संबंधी विचार व्यक्त किए हैं। उदा-

गहि सरनागति राम की, भवसागर की नाव।
रहिमन जगत - उधार कर, और न कछू उपाय।[6]

रहीम कहते हैं, " आदमी हमेशा अपने घमंड में ही रहता है। उसका मन स्वार्थी होता है। भगवान का नाम वह कभी नहीं लेता। भगवान राम की शरण में जाने से इस संसार रूपी भव - सागर से हे मनुष्य। तेरी नाव पार हो जायेगी अर्थात् तुझे मोक्ष मिल जायेगा। इस जगत् से छुटकारा पाने का, मोक्ष पाने का यही एक उपाय है।"

भावनीति -

रहीम दानशूर थे। किसी काव्य, चित्र, उक्ति अथवा कार्य पर प्रसन्न होकर लाखों का पुरस्कार दे डालना रहीम का सामान्य कार्य था। किसी याचक की आवश्यकता देखी या निर्धन की दीनता देखी तो उनका हृदय करुणा से भर आता था। रहीम भावुक हृदय के कवि थे। इसका प्रभाव उनके पूरे काव्य पर पड चुका है।

सामान्य घटना की अनुभूति को गहराइयों तक ले जाना, उसको आस्वाद्य बना देना और उससे नीति रत्न को निकाल लेना रहीम के अनुभूति की अमूल्य उपलब्धी है। रहीम ने सायंकालीन बेला में नारी को दीपक जलाते तथा बुझने के भय से आँचल में छिपाते हुए भी देखा और अंचल से भोर होते समय दीपक को बुझाते हुये भी देखा। कल के रक्षक को आज का भक्षक बनते देखकर नीति - कवि का हृदय, असमय की इस प्रबलता पर चित्कार उठा -

> जिहि अंचल दीपक दुरयौ, हन्यो सो ताही गात।
> रहिमन असमय के परे, मित्र शत्रु हो जात।।[७]

इस दोहे में रहीम कहते हैं, " जिस साडी की ओट में दीपक को छिपा कर स्त्री हवा से उसकी रक्षा करती है, उसी अंचल को दीपक जला देता है। वैसे बुरे दिनों में मित्र भी शत्रु हो जाते हैं।"

इतना ही नहीं अनुभूति के बल पर ही रहीम ने शतरंज के खेल के प्यादे को फरजी बनते देखा है।

> फरजी साह न है सकै, गति टेढी तासीर।
> रहिमन सीधे चाल सों, प्यादी होत वजीर।।[८]

"शतरंज के खेल में वजीर का मोहरा बादशाह नहीं बनता उसका टेढा चलने का स्वभाव है। परंतु सिपाही का मोहरा सीधा चलते हुए वजीर बन जाता है।"

काले बालों के बीच सफेद हुए एक दो बालों को उखाड फेंकना लोक -जीवन का सामान्य व्यापार है, किन्तु रहीम की अनुभूति प्रवणता ने इसे ही कविता का विषय बनाकर नीति - निर्वाचन का अवसर निकाल लिया।

> मूढ मण्डली में सुजन, ठहरत नहीं विसेखि।
> स्याम कंचन में सेत ज्यों, दूरि कीजियत देखि।।[९]

उपर्युक्त दोहे में रहीम कहते हैं कि जिस प्रकार असंख्य बालों के बीच से एक - दो श्वेत बालों को उखाडकर फेंक दिया जाता है उसी प्रकार दुष्टों के बीच से अल्प - संख्यक सज्जन अनादर के भय से स्वयं निकल जाते हैं। सामान्य घटना से कितना बडा तथ्य रहीम ने निकाला है।

आँसू के ढुलकते ही, हृदय के दुःख का प्रकट होना सामान्य है, किन्तु रहीम की अनुभूति यहाँ आँसुओं की बूँदों के समान तरल हो गई है और तरल अनुभूति ने ही बडी सरलता से एक ऐसा तथ्य सामने रख दिया जो विचार करने पर मजबूर कर देता है।

रहिमन अँसुआ नयन ढारि, जिय दुःख प्रकट करेइ।
जाहि निकारौ गेह ते, कस न भेद कहि देइँ ।।[१०]

रहीम कहते हैं, " जब आदमी के मन को गहरा दुःख पहुँचता है तब आँखों से आँसू बहते हैं। आँखों से गिरनेवाले आँसू मन का दुःख प्रकट करते हैं। उसी प्रकार जिसको घर से बाहर निकालते हैं वह घर का भेद दूसरों से कह देता है।

और एक जगह पर रहीम ने अपने नैतिक विचार अच्छी तरह से व्यक्त किये हैं। अर्चन - पूजन आदि के अवसरों पर रोली के अभाव में हल्दी में चूना मिलाने पर उन दोनों के रंग परिवर्तन की सूक्ष्मता पर जिस दृष्टि से रहीम की नैतिक चेतना ने विचार किया वह उनके सूक्ष्म विचारों का द्योतक है। जसै -

रहिमन प्रीति सराहिए, मिले होत रंग इन।
ज्यों जरदी हरदी तजै, तजै सफेदी चूना ।।[११]

रहीम कहते हैं, " चूने और हल्दी के से मेल वाले प्रेम की सराहना करनी चाहिए क्यों कि हल्दी और चूना दोनों ही मिलकर अपना पीला और

A
11725

सफेद रंग छोडकर लाल रंग के बन जाते हैं। ऐसे ही प्रेम में दो प्रेमी अपना अस्तित्व भूलकर एकाकार हो जाते हैं, ऐसा ही प्रेम सराहनीय है।"

सामान्यत: कवि सूक्ष्मचेता प्राणी है। वह घटनाओं की सूक्ष्मता को पकडता है। उन्हें अनुभूति के रंग में ढालता है और भाषा के माध्यम से व्यक्त कर देता है। परन्तु रहीम की इसके अतिरिक्त सामान्य घटनाओं की नीतिपरक व्याख्या करना यह एक अन्य विशेषता है।

नीतिकाव्य और रसानुभूति :

रस द्वारा ईश्वर - संबंधी अथवा मोक्ष से लेकर इन्द्रियों तक का नितान्त स्थूल आनंद अथवा भोग व्यक्त होता है। नीतिकाव्य के कवि अपनी रचना द्वारा उपदेश करते हैं। इसी कारण उसमें रस नहीं आ पाता। लेकिन यह धारणा उच्चप्रतिभासंपन्न कवियों के संबंध में सत्य सिध्द नहीं होती। अनुभूति - प्रवण, भावुक, सक्षम तथा रस-सिद्ध कवि के मानस से अनुभूति के क्षणों में जो निकलता है, वह रस-मय होता है। रहीम का नीति-काव्य इसका प्रमाण है। परंतु रहीम के नीतिकाव्य की एक सीमा है, वह है विषय एवं शैली की। रमणी-सौन्दर्य, कच - कुच - युध्द - श्मशानादि पर रस चर्वणा जितनी सरल है ईश्वर, जीव, प्रकृति, सत्य, परापकारादि विषयों में उतनी ही कठिन है। यह कठिनाई बरवै, दोहे और सोरठे जैसे लघु-आकार के नीति विषयक छन्दों में और भी उग्रतर रूप में उपस्थित होते हैं। और रहीम तो व्यावसायिक या दरबारी कवि नहीं थे। परंतु उनके नीति के दोहों में चुभन की, आल्हाद की, रस की जो संयोजना है उससे मन मोहित होता है।

नीति-काव्य और श्रृंगार भाव :

रहीम ने श्रृंगार - प्रियता का वर्णन स्थान-स्थान पर किया है। फुटकर बरवों तथा श्रृंगार सोरठों के रचयिता की कलम से निकली नीति का भी श्रृंगार

सौरभ में संचित हो जाना स्वाभाविक था। नीति-काव्य के क्षेत्र में श्रृंगार-सरिता का वह अजस्त्र प्रवाह तो नहीं, जो नगरशोभा अथवा बरवै नायिका भेद में है। परंतु उसमें होनेवाली मधुरता अवलोकनीय है। उदा -

जे सुलगे ते बुझि गये, बुझे ते सुलगे नाहिं।
रहिमन दाहे प्रेम के, बुझि बुझि कै सुलगाहिं।।[१२]

इसमें प्रेमाग्नि की लोकाग्नि से भिन्नता दिखाई है। रहीम के अनुसार जो अग्नि सुलग कर कुछ देर में बुझ जाती है और जो पहले ही बुझ गई उसका फिर सुलगना क्या ? प्रेम की अग्नि विचित्र है। यह एक बार लगने पर बुझने का नाम नहीं लेती। इसमें जला प्राणी बुझ-बुझकर सुलगता है। सुलग - सुलग कर बुझने की मिठास निश्चित ही हृदय में एक गुदगुदी उत्पन्न करती है। और यही गुदगुदी रहीम के श्रृंगार की विशेषता है। वे अपने श्रृंगार संचित नीति - काव्य को उस सीमा तक नहीं ले जाते जहाँ पहुँचकर वासना की गंध उभारने लगती है।

रहीम ने अपने काव्य में नारी के विभिन्न शारीरिक अंगों, क्रियाओं तथा घटनाओं का वर्णन किया है। इससे रहीम की अतिशय भावुकता एवं श्रृंगार काव्य - क्षमता का स्पष्ट परिचय मिल जाता है। "श्रृंगारिक कवि जिन उपक-रणों से केवल कामोद्दीपन का वर्णन करते रहे हैं, उन्हीं के माध्यम से रहीम ने सरसतापूर्वक नीति और श्रृंगार के संयोग द्वारा एक पंथ दो काज सिद्ध किये हैं। इसी कारण उनके नीति-कथन कोरे नीरस उपदेश न रहकर काव्यत्व को प्राप्त हुए हैं।"[१३]

नीति - काव्य और शांत भाव :

रहीम कोई साधु-संत नहीं थे, फिर भी कई स्थानों पर उनके काव्य में वैराग्य भाव की झलक दिखाई देती है। जीवन में शांत भाव को अधिक महत्त्व होता है। शांत रस आत्मविश्राम का रस है और नीति, लोकानुरक्ति का। शांत भाव की मूल भावना उदात्त होती है। रहीम के नीतिकाव्य में शांत रस के कई उदाहरण मिलते हैं। जैसे -

कहु रहीम केतिक रही, केतिक गई विहाय।
माया ममता मोह परि, अन्त चले पछिताय।।[१४]

उपर्युक्त दोहे में रहीम ने कहा है कि व्यक्ति माया, ममता, मोह में पडकर ईश्वर का ध्यान नहीं करता और जीव अंत में पछताता हुआ इस संसार से चला जाता है। रहीम को जीवन के अंतिम दिनों में पछताना पडा था, उसकी चर्चा जीवन-प्रसंग में हो चुकी है। उन्होंने अपने जीवन में अपार धन प्राप्त किया था। परंतु अपने अंत समय की खस्ता हालत पर रहीम ने जब विचार किया, तब जीवन के सत्य का कटु अनुभव मिला। पारिवारिक दृष्टि से वे दु:खी थे। इसी कारण उनकी अभिव्यक्ति में गहराई है, साथ ही वास्तविकता भी है।

सच्चे अनुभवों को रहीम ने अपने दोहों में व्यक्त किया है, जो जीवन में सहना पडा उसे रहीम ने ज्यों का त्यों उदाहरणों द्वारा प्रकट किया है।

नीति - काव्य और हास्य - व्यंग्य - विनोद भाव :

व्यक्ति के जीवन में जैसे गंभीर्य है, वैसे हास्य भी है। हास्य शारीरिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है। हास्य जीवन की नीरसता को दूर करके हल्कापन निर्माण करता है। काव्यशास्त्र के अनुसार अष्ट रसों में "हास्य" प्रधान रस है। परंतु रहीम के काव्य में "हास्य" की मात्रा कम है। सूर, तुलसी, बिहारी आदि के काव्य में शिष्ट हास्य व्यंग्य के छन्द लिखे गये हैं। रहीम का नीति - काव्य भी इसे अपवाद नहीं। उनके दोहे तो गंभीर एवं शिष्ट हास्य के सुन्दरतम उदाहरणों में से हैं, जैसे -

कमला थिर न रहीम कहि, यह जानत सब कोय।
पुरूष पुरातन की वधू, क्यों न चंचला होय।।[१५]

इस दोहे में लक्ष्मी चंचल होने की काव्यात्मक हास्य अभिव्यक्ति हो गई है। भगवान विष्णु पुरातन या वृध्द पुरूष है। उनके साथ चिरयौवना वधू लक्ष्मी का

विवाह हो चुका है। तब बूढे की पत्नी कैसे चुप बैठेगी ? लक्ष्मी चंचल होकर दूसरे की पत्नी होती है। इस प्रकार हास्य पुट के साथ दोहे द्वारा नैतिक बात कही गयी है कि, बुढापे में तरूणी के साथ विवाह करना उचित नहीं है। इससे उनकी पत्नी चंचला बन सकती है और उनके कुल पर कलंक लग सकता है। इससे बचने की संभवना कम है। क्योंकि स्वयं लक्ष्मी तक का चांचल्य किसी से छिपा नहीं। दूसरा भाव यह है कि लक्ष्मी का अनावश्यक संग्रह तथा प्रेम व्यर्थ है, क्यों कि वह स्वभावत: चंचल है, रूकेगी नहीं। साथ ही वृध्द-विवाह का रहीम ने निषेध किया है।

इस प्रकार अनमेल विचारोंवाले दम्पति पर उन्होंने सुन्दर हास्य का संयोजन किया है। उदा -

पुरूष पूजैं देवरा, तिय पूजै रघुनाथ।
कहि रहीम दोउन बनै, पडो बैल के साथ।।[१६]

उपर्युक्त दोहे में जिस घर का पुरूष इधर-उधर के झाड-फूक, देवी-देवता तथा भूत-प्रेतादि के दरवाजों पर टक्कर मारनेवाला हो और उसकी स्त्री श्रीराम की पूजा करनेवाली हो, तो दोनों के विचारों में भिन्नता आकर संसार का मजा किरकिरा हो जाता है। पुरूष एक बैलगाडी है जो एक-सी वृषभ जोडी से ही गतिमान होती है। परंतु अगर जुए के एक और बैल तथा दूसरी ओर पाडा अथवा भैंसा बैल हो, उन्हें कितना भी मारा जाय तो आगे नहीं बढ सकते हैं। इसलिए संसार में पति-पत्नी के विचार समान होने चाहिए। अगर ऐसा नहीं हो सकता है तो पुरूष स्त्री जैसा हो जाय या पत्नी को पुरूष के अनुसार बनना पडा जाय।

इस उदाहरण से ही समझ में आता है कि रहीम की दृष्टि कितनी सूक्ष्म थी। संसार के सामान्य अनुभवों से उन्होंने कितना व्यापक अर्थ प्रकट किया है। संसार करते समय पति - पत्नी की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण होती है। उन दोनों

में से एक अगर गलत मार्ग पर चला जाय तो संसार का मजा किरकिरा हो जाता है। इस बात को रहीम ने वृषभ और पाडे को लेकर हास्य व्यंग्य के साथ संसार किस प्रकार करना चाहिए उसे व्यक्त किया है। इस प्रकार नीति – तत्व प्रधान शिष्ट हास्य का उदा –

ज्यौ नाचत कठपूतरी, करम नचावत जात।
अपने हाथ रहीम ज्यौ, नहीं आपुने हाथ।।[१७]

उपर्युक्त दोहे में बताया गया है कि जिस प्रकार कठपुतली नचाने वाला कठपुतली को नचाता है उसी प्रकार कर्म (प्रारब्ध) मनुष्य के शरीर को नचाता है। हमें तो ऐसा लगता है कि सब काम हमारे ही हाथों से हो रहे हैं पर हमारे हाथ में कुछ नहीं होता।

नीति – काव्य और भक्ति के भाव :

भारत की धर्म – भावना विश्वविख्यात है। धर्म में जितना प्रमुख स्थान भक्ति का है, उतना न तो योग का है और न साधना का है। इसलिए जन – साधारण ने धर्म और भक्ति को प्राय: एक ही समझ लिया है। दक्षिण के रामानुज, मध्व एवं निम्बार्क आदि जग प्रसिध्द आचार्यों और वल्लभ–विट्ठलादि जनमान्य धर्मानुयायीओं से लेकर सूर, तुलसी, हरिऔध और मैथिलीशरण गुप्त आदि कवियों ने भक्ति पर विभिन्न दृष्टिकोणों से विचार किया है।

प्रेम – रूपा भक्ति, आंतरिक एवं बाहय आधारों पर दो प्रकार की होती है। अपनी – अपनी मान्यताओं के अनुसार प्रार्थना, नमाज, चन्दन, हवन, प्राणायाम और जप आदि के द्वारा इष्टदेव की उपासना करना, भक्ति का बाहय स्वरूप है। प्रभु – प्रेम जीव – दया, मानव–कल्याण एवं इष्ट–चिंतन में अनुरक्ति, भक्ति का आंतरिक रूप है।

श्रेष्ठ भक्ति की अभिव्यक्ति की दृष्टि से, हिन्दी का भक्तिकाल अपना सानी नहीं रखता। दैवयोग से रहीम का जन्म उस समय हुआ था, जब कि संपूर्ण भारत में भक्ति - भावना अपने अतुलनीय वैभव के साथ स्थापित हो चुकी थी। अकबर की उदार धर्म - नीति, अनुकूल शिक्षा, संस्कृत भाषा का ज्ञान, गंग आदि सद्कवियों की संगति तथा तुलसी आदि संतों की मित्रता ने रहीम के हृदय में, सगुण भक्ति की वही धारा प्रवाहित कर दी, जिसके प्रवाह में तत्कालीन हिन्दू समाज बडे वेग से बहा जा रहा था।

रहीम फुटकर बरवों, संस्कृत श्लोकों तथा कतिपय छन्दों में गणेश तथा हनुमान आदि हिन्दू देवी - देवताओं की स्तुति कर चुके थे। भक्ति-भाव भरे उनके हृदय से जो छन्द निर्मिती हुई, उन्हें देख यह आभास ही नहीं होता कि ये किसी मुसलमान की रचनाएँ हैं।

जहाँ तक नीति - काव्य में भक्ति - भाव के समन्वय का प्रश्न है, इसके दर्शन हमें रहीम - दोहावली के प्रथम दोहे से ही होने लगते हैं। उदा -

अच्युत - चरण - तरंगिणी, शिव - सिर -मलित - माल।
हरि न बनावो सुरसरी, की जो इन्दव - भाल ।।[१८]

उपर्युक्त दोहे में रहीम कहते हैं - " हे गंगे । तुम्हारी महिमा से भक्तजन मरने के बाद विष्णु और महादेव का पद प्राप्त कर लेते हैं। परंतु तुम मुझे विष्णु का रूप न बनाना क्यों कि विष्णु रूप बनाने पर तुम चरणों से निकलने वाली नदी कहलाओगी जो उचित नहीं है, अत: तुम मुझे महादेव रूप ही बनाना ताकि मैं तुम्हें आदर के साथ मस्तक पर धारण कर सकूँ।"

रहीम के भक्ति - काव्य की जो विशेषताएँ हैं उनमें नीति समन्विति महत्त्वपूर्ण है। रहीम ने अन्यान्य भक्तिकालीन कवियों की भाँति अपने काव्य के

कोरे आत्मनिवेदन या राम – कृष्णादि के रूप में वर्णन तक सीमित नहीं किया, उन्होंने अपने भक्ति – भावों को नीति – कथनों से समन्वित करके व्यक्त किया है। उनके दोहे भक्ति से सम्बध्द होते हुए भी नीति के ही दोहे हैं। रहीम का विश्वास था कि सामान्य से सामान्य व्यक्ति भी हार्दिक प्रेम के बल पर महान से महान व्यक्ति को वश में कर सकता है। उदा –

रहिमन मनहि लगाय कै, देखि लेहु किन कोय।
नर को बस करिबौ कहा, नारायण बस होय।।[१९]

इस दोहे में रहीम कहते हैं – " मनुष्य का जीवन ऐसा है कि जो भगवान की मर्जी के अनुसार चलता है। मनुष्य के हाथ में कुछ नहीं होता है। सब कुछ भगवान के हाथ में है। एकाध व्यक्ति से प्रेम हो जाता है, हम उसे चाहने लगते हैं अगर वह हमारे नसीब में है तो मिलता है नहीं तो नहीं। फिर भी मन लगाना होगा, वह अपना हो जाता है।"

रहीम ने काल के सम्मुख औषधियों की प्रभावहीनता सिध्द करते हुए अनाथ के नाथ हरि द्वारा रक्षित वन–पादपों और खग – मृगों का उदाहरण प्रस्तुत किया है –

" रहिमन " बहु भेषज करत, व्याधि न छाँडति साथ।
खग – मृग बसत अरोग बन, हरि अनाथ के नाथ।।[२०]

रहीम कहते हैं कि, " भगवान असहायों के स्वामी हैं। मनुष्य अपनी बिमारी पर इलाज करता है फिर भी रोग उसका साथ नहीं छोडता, परंतु बन में पशु और पक्षी निरोगी रहते हैं।"

मूल से सींचने से संपूर्ण शाखा पत्रादि के अघाने एवं फलने – फूलने की याद दिलाकर रहीम प्रभु की साधना करने पर बल देते हैं। उदा–

अमरबेलि बिनु मूल की, प्रतिपालत है ताहि ।
रहिमन ऐसे प्रभू ताजे, खोजत फिरिए कांही ।।[२१]

उपर्युक्त दोहे में रहीम बताते हैं, "बिना जड की अमरबेल को पोषित करने वाले प्रभू को तज कर हे मनुष्य। तू किसके आश्रय की खोज करता है अर्थात तुझे ऐसे शक्तिवान प्रभू की साधना करनी होगी।"

पुरूष पुरातन की वधू का उदाहरण देकर रहीम धन - संपत्ति का चांचल्य व्यक्त करते हैं। उदा -

पृ.44

कमला थिर न रहीम कहि, मद जानत सब कोय।
पुरूष पुरातन की वधू क्यों न चंचला होय ।। [२२]

रहीम कहते हैं - " कमला (लक्ष्मी) कभी स्थिर नहीं रहती अर्थात् धन कहीं भी स्थायी नहीं होता वह कभी एक के पास रहता है, तो कभी किसी अन्य स्थान पर होता है। वृध्द विष्णु की पत्नी होने के कारण लक्ष्मी क्यों न चंचला होगी ? अर्थात जिस प्रकार वृध्द की जवान पत्नी चंचल स्वभाव की होती है उसी प्रकार लक्ष्मी भी चंचल स्वभाव की होती है।"

रहीम नयन बाणों से बचने का श्रेय केवल भक्ति को ही देते हैं। उदा -

कहि रहीम जग मारियो, नैन - बाण की चोट।
भगत - भगत कोऊ बचि गये, चरन कमल की ओट ।।[२३]

इस दोहे में रहीम बताना चाहते हैं - " संपूर्ण संसार स्त्री के नेत्र रूपी बाणों की चोट से मर गया, केवल कुछ भगवान के भक्त ही बच सके, जिन्होंने भगवान के चरण रूपी कमलों की ओट ले ली थी।"

रहीम दीनबंधु से बंधुता स्थापित करा सकने में समर्थ, दिव्य दिनता की सराहना करते नहीं अघाते। उदा -

दिव्य दीनता के रसहिं, का जाने जग अंधु।
भली विचारी दीनता, दीन बंधु से बंधु।।[२४]

"यह अंधा संसार निर्धनता के स्वाद को क्या समझेगा। वह बेचारी दीनता (निर्धनता) ही भली जिसके दीनबन्धु भगवान जैसे बन्धु हैं। ऐसे लोगों के साथ रहीम बंधुता स्थापित करना चाहते हैं।"

सभी लोग समय - दशा - कुल देखकर सम्मान करते हैं। किन्तु भगवान के दरबार में ऐसी अव्यवस्था नहीं है। वे अपने दीन एवं अनाथ भक्तों का सहारा स्वयं है। उदा -

समय दसा कुल देखि कै, सबै करत सनमान।
रहिमन दीन अनाथ को, तुम बिन को भगवान।।[२५]

उपर्युक्त दोहे में रहीम कहते हैं - " कई लोग व्यक्ति का खानदान उसकी परिस्थिति को देखकर सम्मान करते हैं, परंतु जो दीन हैं उनका नाथ भगवान ही है।"

रहीम ने अपने नीति - कथनों के लिए सदैव रामायण, महाभारत तथा पुराणों से उदाहरण दिये हैं। ये उदाहरण उनकी श्रध्दा, भक्ति, निष्ठा तथा हिन्दू अभिरुचि के प्रतीक हैं।

इतना ही नहीं रहीम असमय आने पर आवश्यकतानुसार माँगने का औचित्य व्यक्त करते हुए वे लक्ष्मण द्वारा पाराशर मुनि से अनाज माँगने का उल्लेख करते हैं। उदा -

असमय परे रहीम कहि, माँगजात तजि लाज।
ज्यों लछमन माँगन गए, पारासर के नाज।।[२६]

बुरे दिनों में रहीम कहते हैं कि - "लज्जा को त्याग कर किसी के घर माँगने जाना पडता है। जैसे लक्ष्मण को बुरे दिनों में पाराशर ऋषि के घर अनाज माँगने जाना पडा था।"

जब संकट आता है तब रहीम को चित्रकूट याद आता है उदा -

चित्रकूट में रमि रहे, रहिमन अवध नरेश।
जा पर विपदा पडति है, सोआवति यहि देश।।[२७]

रहीम कहते हैं, " अवध के राजा राम चित्रकूट में निवास कर रहे हैं। जिस व्यक्ति पर संकट आता है वह शरण लेने इसी स्थान पर आता है।"

जब बडे लोग छोटा-सा कार्य करते हैं तब उन्हें बडप्पन मिलता है, पर छोटे लोग बडा कार्य करते हैं, तब उन्हें बडप्पन नहीं मिलता यह देखकर वे उदाहरण देते हैं -

ओछे काम बडे करें, तो न बडाई होय।
ज्यो रहीम हनुमंत को, गिरधर कहे न कोय।।[२८]

रहीम कहते हैं - "कोई सामान्य व्यक्ति बडा या महत्वपूर्ण काम करे तो उसकी बडाई नहीं होती। श्रीकृष्ण-भगवान ने उँगली पर गोवर्धन पर्वत उठाकर गोकुलवासियों की वर्षा से रक्षा की तब उन्हें गिरिधर (गिरि-अर्थात पर्वत धारण करनेवाला) कहा गया, पर हनुमान ने हथेली पर पर्वत उठा लिया तब किसीने उन्हें गिरिधर नहीं कहा।"

भावी का होना हमारे हाथ में नहीं है। इसे व्यक्त करते हुए श्रीराम के कपट मृग के पीछे जाने का वे उदाहरण देते हैं।

जो रहीम भावी कतौ, होति आपने हाथ।
राम न जाते हरिन संग, सीय न रावन साथ।।[२९]

रहीम कहते हैं, " भावी अपने हाथ नहीं होती । इसी कारण भगवान राम न यदि हरिन के पीछे जाते और न ही माता सीता रावण के साथ जा पाती । हमारे हाथ कुछ भी नहीं है ।"

साथ ही रहीम ने रामायण प्रसंगों के समान महाभारत के प्रसंगों से नैतिक प्रमाण प्रस्तुत किये हैं । जैसे - पुरूषार्थ के संबंध में भीम की रसोई तथा दुर्दिन पडने पर पांडवों द्वारा पाँच विभिन्न रूप लेकर काम करना आदि । उदा -

जो पुरूषारथ ते कहूँ, संपति मिलत रहीम
पेट लागि बैराट घर, तपत रसोई भीम ।। [३०]

रहीम कहते हैं, "केवल पुरूषार्थ करने से ही संपत्ति नहीं मिलती । मात्र पुरूषार्थ से ही संपत्ति मिल जाती तो महापुरूषार्थी भीम अपना पेट भरने के लिए विराट के घर खाना बनाने वाला रसोइया न बनता ।"

रहीम के काव्य में पुराणोंके प्रसंग रामायण - महाभारत से अधिक हैं । क्षमा के प्रसंग में विष्णु के हृदय पर भृगु ऋषी का लात मारना सम्मान - असम्मान के प्रसंग पर शंकर का विष -पान करना तथा राहु-शीष उच्छेदन प्रसंग का उदाहरण दिया है । अपने गोत्र के उत्कर्ष के प्रसंग में वराह अवतार द्वारा भूमि - उत्खनन करना, बडों की गर्वहीनता के प्रसंग में शेषद्वारा भार वहन करने का उदाहरण दिया है । इतना ही नहीं परोपकार के प्रसंग में शिवि और दधीचि का उदाहरण दिया है । ऐसे अनेक पौराणिक उदाहरणों द्वारा भक्ति के साथ नीति के बारेमें विचार व्यक्त किए हैं ।

रहीम का काव्य, भक्ति की दृष्टि से सूर, तुलसी के विशाल काव्य से समतुल्य नहीं, परंतु भिन्न धर्म के होते हुए भी उन्होंने राम - कृष्णादि के प्रति श्रध्दाभाव से जो कुछ लिखा है, उसका महत्व सूर, तुलसी के काव्य से कम

नहीं है। रहीम के नीति - काव्य में कीर्तन, स्मरण, अर्चन, ईश्वर का गुण कथन आदि के संबंध में दोहे प्राप्त होते हैं। रहीम को जहाँ भी, जिस किसी प्रसंग में अवसर प्राप्त होता है, अपने प्रभु के गुण - कथन से कभी नहीं अघाते। भगवान की दीन - बन्धुता पर तो उनका विश्वास और भी अटल है।

दीन सबन को लखत है, दीनहिं लखै न कोय।
जो रहीम दीनै लखै, दीन बंधु सम होय।।[३१]

रहीम कहते हैं, "दीन व्यक्ति सबकी ओर निहारता है लेकिन उसकी ओर कोई नहीं देखता अर्थात उसकी परवाह नहीं करता। जो दीनों का ध्यान रखते हैं वे दीनबन्धु अर्थात देवता के समान होते हैं।"

रहीम का नीतिकाव्य और श्रृंगार काव्य :

रहीम के जीवन एवं व्यक्तित्व से स्पष्ट होता है कि वे भावुक प्रकृति के रसिक जीव थे। फिर भी युध्द विषयक कठोरता भी उनमें कम नहीं थी। रहीम का श्रृंगार काव्य लोक तथा शास्त्र की सीमाओं को छूते हुए भी नैतिकता से भरा है, साथ ही भावुक रसानुरागियों के लिए आनंद की अक्षुण्ण निधि है। उदा -

कहा करौं बैकुण्ठ लै, कल्पवृक्ष की छाँह।
रहिमन ढाक सुहावनो, जो गल प्रीतम बाँह।।[३२]

रहीम कहते हैं, "यदि प्रिय अपने समीप न हो तो स्वर्ग प्राप्त करके अथवा कल्पवृक्ष की छाया में बैठ कर क्या करें। अगर गले में प्रियतम की बाँह पडी हो तो ढाक का वृक्ष भी सुहावना लगेगा।"

<u>रहीम का संयोग वर्णन :</u>

काव्यशास्त्रियों ने श्रृंगार रस के दो भेद किए हैं। इनमें पहला है संयोग या श्रृंगार और दूसरा वियोग या विप्रलम्भ श्रृंगार। संयोग का सामान्य अर्थ है मेल। रहीम की रचनाओं में संयोग के न्यूनाधिक उदाहरण प्राप्त होते हैं। सब से कम उदाहरण "दोहावली" में तथा सब से अधिक "नगर शोभा" में मिलते हैं। फुटकर बरवै प्रमुखत: वियोग पक्ष को लेकर लिखे गये हैं। श्रृंगार सोरठ के भी आधे छंद वियोग के ही हैं। मदनाष्टक और बरवै नायिका - वियोग के ही हैं। संयोग श्रृंगार का उदाहरण इस प्रकार है -

बिरहिन और बिदेसिया, भौ इक ठौर।
पिय मुख हेरि तिरिअवा, चन्द्र चकोर।।[३३]

उपर्युक्त दोहे में रहीम कहते हैं, "बिरहिन और विदेशी का लम्बे वियोग के पश्चात् एक जगह मिलना और एक दूसरे के मुख को चन्द्र - चकोर की भाँति अपलक निहारना कितना स्वाभाविक है।"

प्रीतम छबि नैनन बसी, पर छबि कहा समाय।
भरी सराय रहीम लखि, पथिक आप फिरि जाय।।[३४]

रहीम कहते हैं, "सराय में स्थान नहीं है यह देखकर जैसे पथिक वहाँ से लौट जाता है, वैसे नेत्र में प्रियतम की छवि देखकर और अपने लिये यहाँ स्थान नहीं है ऐसा जानकर अन्य मेरे सामने से दूर हो जाता है।"

"नगर शोभा" रचना में सिर पर घडा रखे, हाथ में रस्सी लिए, प्रमियों से लजाती - शर्माती पनिहारिन का चित्र इस प्रकार है -

घरो भरौ धरि सीस पै, बिरही देखि लजाई।
कूक कंठ तौं बाँधि कै, लेजू लै ज्यों जाई।। [३५]

SHIVAJI UNIVERSITY LIBRARY KOLHAPUR

रहीम बताते हैं – "पनघट पर जानेवाली विरहिन अपने माथे पर घडा रखकर जाने लगी थी कि अपने प्रेमी को देखकर शर्मा जाती है। वह कुछ शर्म के कारण बोल भी नहीं सकती है।"

रहीम के काव्य में संयोग श्रृंगार के वर्णन बहुत ही कम हैं। रहीम ने अपने काव्य में अन्य कवियों के समान नायक – नायिकाओं के अंग-प्रत्यंगों का वर्णन नहीं किया है। उन्होंने नख – शिख पर कोई काव्य नहीं लिखा। परंतु कुछ स्थानों पर कुच और केशों का वर्णन किया है।

मनुष्य के जीवन में श्रृंगार को महत्व है, रहीम यह जानते थे। परंतु राजा और अन्य दरबारियों को खुष करने के लिए उन्होंने कभी श्रृंगार का अनावश्यक वर्णन कर मर्यादा का उल्लंघन नहीं किया है।

रहीम का वियोग श्रृंगार :

जैसे सुख के साथ दु:ख और रात्रि के साथ दिन का संयोग आवश्यक है, उसी प्रकार संयोग के साथ वियोग भी अनिवार्य है। प्रेमियों के जीवन में सुख से अधिक दुख तथा संयोग से अधिक वियोग होता है। यह संसार की रीति है। इसलिए रहीम ने वियोग को भादों की अंधेरी रात तथा संयोग को खद्योत का प्रकाश कहा है –

विरह रूप धन तम भयो, अवधि आस उद्योत।
ज्यों रहीम भादों निसा, चमकि जात खद्योत।।[३९]

रहीम कहते हैं, " जिस प्रकार भादों की रात में जुगनू चमक जाते हैं उसी प्रकार विरह रूपी घने अंधकार में अवधि का आशा रूपी प्रकाश चमक जाता है।"

रहीम के काव्य में विरहिणियों की उक्तियाँ इतनी भाव – भरित हैं कि इस कठोर सेनापति के कोमल हृदय पर आश्चर्य हुए बिना नहीं रहता। उन्होंने

वियोग श्रृंगार का वर्णन करते समय प्रकृति से अनेक उपदेश लिये हैं, वहाँ प्रकृति का वातावरण के लिए प्रयोग किया है। उदा -

कबलौं रहिहै सजनी, मन में धीर।
सावन हूँ नहिं आवन, कित बलबीर।।
घन घुमडे चहूँ ओरन, चमकत बीज।
पिय प्यारी मिलि झूलत, सावन तीज।।[37]

"सावन आया, चारों ओर बादल छा गये। बादलों की गडगडाहट, बिजली की चमक से बिरहन नायिका को अपने बलबीर प्रियतम की तीव्रता से याद आने लगी - बेचारी मन में कब तक धीरज धरे ? कब तक प्रतीक्षा की असह्य घडियाँ गिनती रहे ? उसकी प्यारी सहेलियाँ मिलकर झूला झूलने लगी, गीत गाने लगी, पर इस विरहिणी नायिका को सखियों का झूला झूलना अच्छा नहीं लगता और न ही सावन का तीज - त्योहार। उसे बस प्रियतम की प्रतीक्षा है।"

रहीम ने अपने बरवैं में मासों का नामोल्लेख करके विरह - वर्णन किया है। इतना ही नहीं उन्होंने विरह का वर्णन उध्दव से, सखी से और कृष्ण संबोधन के माध्यम से किया है।

नीति - काव्य और बीभत्स भाव :

जीवन में प्रेम और घृणा दोनों भावनाएँ होती हैं। रक्त, मांस, श्मशानादि इसके आलंबन हैं। दुर्गंध, मांसभक्षण चीत्कार आदि उद्दीपन हैं। नेत्र बंद कर लेना, मुँह फेर लेना, थूकना आदि अनुभाव, आवेग, जडता, वैवर्ण्य, चिन्ता आदि संचारी भाव बीभत्स रस के विषय हैं। रहीम के काव्य में बीभत्स भाव के बहुत ही कम उदाहरण मिलते हैं। एक उदा -

रहिमन असमय के परे, हित अनहित है जाय।
बधिक बधै मृग बान सों, रुधिरैं देत बताय।।[38]

रहीम कहते हैं, " बुरा समय आने पर हितकर वस्तु भी अहितकारी हो जाती है। जैसे बहेलिया बाण से हरिण को मारता है, तो उसके भाग जाने पर बहेलिया घाव से बहने वाले हरिण के रक्त से हरिण का पता लगाता है।"

रहीम ने अपने काव्य में बीभत्स भावों का अधिक वर्णन नहीं किया है।

नीति – काव्य में वीर रस :

वीर रस, नव रसों में प्रधान रस है। इसका काव्य में अपना एक महत्व है। रहीम वीर, योध्दा होने के कारण यह रस उनके अनुकूल पडता था, परंतु रहीम ने वीर रस का प्रयोग अपने काव्य में अत्यंत कम किया है।

सबै कहावै लसकरी, जब लसकर कँह जाय।
रहिमन सेल्ह जोइ सहै, सोइ जागीरै खाय।।[३९]

उपर्युक्त दोहा रहीम ने अपनी जागीरों को देखकर जलनेवाले किसी व्यक्ति को अप्रत्यक्ष रूप से सुनाने के लिए लिखा हो। जो हाथियारों की चोट सहता है, वही जागीरें खाता है, केवल बातें बनाने वाले को पुरस्कार प्राप्त नहीं हो सकते।

बात यह है कि रहीम वीर रस के संबंध में प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से कुछ लिखे बिना या युध्द संबंधी ज्ञान का किसी न किसी प्रकार उपयोग किए बिना न रहे होंगे।

रहीम के नीतिकाव्य में व्यावहारिकता। :

रहीम ने अपने जो अनुभव दोहों द्वारा व्यक्त किए हैं, वे क्रियात्मक जीवन और व्यावहारिकता पर आधारित हैं। रहीम थोथे आदर्श के विरोधी थे और न ही त्यागी – ब्रह्मचारी फिर भी उन्होंने सामा मर्यादाओं का पूर्ण निष्ठा के साथ निर्वाह करने को महत्वपूर्ण माना। वृध्दावस्था में जो विवाह

करते हैं, उनपर वे करारी चोट करते हैं। ऐसी कुप्रवृत्तियों पर आघात करते हुए उन्होंने व्यावहारिक आदर्श को महत्व दिया है।

जीवन में हमेशा हमें अच्छे, बुरे सभी व्यक्तियों से मिलना होता है। वे अपनी बुध्दियोग्यता और शिक्षा - दीक्षानुसार व्यवहार करते हैं तब हमें मूर्खों के व्यवहार का बुरा मानकर व्यर्थ ही बहस बढाना नहीं चाहिए ऐसा रहीम मानते हैं। उदा -

> जैसी जाकि बुध्दि है, तैसी कहै बनाय।
> ताको बुरो न मानिये, लैन कहाँ तू जाय।।[४०]

रहीम कहते हैं, "जैसी जिसकी बुध्दि होती है वैसा ही वह बनता है। अल्प बुध्दिवालों की बात का बुरा नहीं मानना चाहिए क्यों कि उनसे लेना ही क्या होता है।"

मूर्ख लोगों के साथ सहानुभूति का व्यवहार करना सज्जनों की विशेषता है, ऐसा रहीम कहते हैं। यही विशेषता दुष्टों के साथ व्यवहार करते समय उपयोग में लानी चाहिए। सहानुभूति के आधारपर ही हम अपने सगे - संबंधियों के साथ और इष्ट मित्रों से व्यवहार करते हैं। इससे ही जीवन जीने योग्य बनता है। इन उदाहरणों से यही सिध्द होता है कि रहीम ने अपने काव्य में व्यावहारिकता पर बल दिया है।

रहीम का नीतिकाव्य और लक्ष्मी - ऐश्वर्य का वर्णन :

लक्ष्मी के बारेमें रहीम कहते हैं -

> कमला थिर न रहीम कहि, लखत अधम जे कोय।
> प्रभु की सो अपनी कहै, क्यों न फजीहत होय।।[४१]

रहीम कहते हैं, " कमला (लक्ष्मी) कभी एक जगह स्थिर नहीं रहती। और जो व्यक्ति उसे स्थिर मानते हैं वे अधम हैं। क्यों कि भगवान विष्णु की स्त्री

को जो अपनी समझते हैं, वे अपनी फजीहत करा लेते हैं। भगवान विष्णु की पत्नी को अपना समझना उचित नहीं है।" तात्पर्य लक्ष्मी (धन) किसी का कभी नहीं होती है, उसे रहीम ने चंचल कहा है।

एक ओर रहीम लक्ष्मी के कारण दुर्गति होती है ऐसा मानते हैं, तो दूसरी ओर वे ये भी जानते थे कि संसार में सभी कार्यव्यापार लक्ष्मी के माध्यम से संपन्न होते हैं। संकट के समय तो लक्ष्मी ही सबसे बडा सहारा है। संपत्ति के बिना जीवन निष्प्रभ होता है।

रहीम का नीतिकाव्य और दान :

रहीम का व्यक्तित्व उदार दानी का व्यक्तित्व था। उनके अनुसार दान-हीन जीवन व्यर्थ हैं। उदारता पूर्वक धन देने के वे ईश्वरीय कृत्य समझते थे। वे मानते थे कि दानी को याचक को इतना दान देना चाहिए जिससे वह तृप्त हो। कई लोग माँगने से शर्माते थे तब रहीम उनकी स्थिति जानकर बिना माँगे दान देते थे। रहीम दान के बारेमें कहते हैं -

दीन सबन को लखत है, दीनै लखै न कोय।
जो रहीम दीनै लखैं, दीन बंधु सम होय।।[४२]

"दीन व्यक्ति सबकी ओर देखता है, लेकिन उसकी ओर कोई नहीं देखता अर्थात् उसकी परवाह नहीं करता। रहीम के अनुसार जो दीनों का ध्यान करते हैं वे दीनबन्धु अर्थात् भगवान के समान होते हैं।"

रहीम के नीतिकाव्य में सम्मान के बारेमें विचार :

रहीम ने कहा है कि सम्मान का सब से बडा शत्रु निर्धनता है। रहीम ने सम्मान की रक्षा में वन का निवास, निर्धन और असम्मानपूर्ण जीवन बिताने की अपेक्षा कही उत्तम समझा है। रहीम के अनुसार धन की चिन्ता न करते हुए, सम्मान

का ध्यान कुलीनता का द्योतक है। सम्मान जाने की आशंका उत्पन्न होते ही, स्थान का त्याग कर देना चाहिए। सम्मान को ही वे जीवन मानते हैं और अपमान को मृत्यु मानते हैं।

रहीमन पानी राखिये, बिन पानी सब सून।
पानी गये न ऊबरे, मोती मानुस चून।।[४३]

रहीम कहते हैं, "पानी अवश्य रखना चाहिए क्यों कि पानी के बिना सब सूना हो जाता है अर्थात् व्यर्थ हो जाता है। पानी के चले जाने से कोई महत्व नहीं रहता, क्यों कि मोती का पानी (उसकी कांति) चला जाने से वह बेकार हो जाता है। उसी प्रकार मनुष्य से पानी, उसका आत्म-सम्मान चला गया तो वह प्रतिष्ठाहीन मनुष्य दो कौडी का रह जाता है। ऐसे ही चूने से पानी जाता है तो चूना बेकार हो जाता है।"

रहीम के नीतिकाव्य में परोपकार के बारेमें विचार :

रहीम परोपकारी जीव थे। स्वत: रहीम ने अपने नीति-काव्य में परोपकार पर कई दोहे लिखे हैं। उन्होंने घडे और रस्सी का उदाहरण देते हुए परोपकार के भाव को बहुत अच्छी तरह से समझाया है। उदा -

रहिमन रीति सराहिए, जो घट गुन सम होय।
भीति आप पै डारि कै, सबै पियावै तोय।।[४४]

रहीम घडे की प्रशंसा करते हुए कहते हैं, -

"घडा अपने गले में रस्सी की फाँसी बंधवाता है, जल में डूबता है, कुएँ के फेरे से टकराकर अपने अस्तित्व के विनष्ट होने का खतरा मोल लेता है, परंतु दूसरे की तृष्णा को अवश्य शांत करता है।"

नीतिकाव्य में सत्संगति के बारेमें विचार :

रहीम ने सत्संगति के बारेमें अधिक कुछ नहीं लिखा है। वे कहते हैं, "जिसके संस्कार उत्तम हैं कुसंगति उसका कुछ बिगाड नहीं सकती और जो संस्कार हीन है, सत्संगति उसे प्रभावित नहीं कर सकती" उदा -

> जो रहीम उत्तम प्रकृति, का करि सकत कुसंग।
> चन्दन विष व्यापत नहीं, लपटे रहत भुजंग।।[४५]

रहीम कहते हैं, "जो लोग उत्तम प्रकृति के होते हैं अर्थात् जिन लोगों का स्वभाव अच्छा है, ऐसे लोगोंपर कुसंगति का प्रभाव नहीं पडता। जिस प्रकार चन्दन के वृक्ष के साथ जहरीले सर्प लिपटे रहते हैं, परंतु चन्दन के वृक्ष पर जहरीले सर्प का प्रभाव नहीं पडता।"

नीतिकाव्य में कुसंग के बारेमें विचार :

नीच के संग का ही दूसरा नाम कुसंग या कुसंगति है। इसमें फँसकर व्यक्ति बरबाद होता है। रहीम ने कुसंग को कालिख लगा बरतन कहा है, उन्होंने कुसंग की तुलना अंगारे से की है। उनका मत है कि सत्संगति से अधिक कुसंग का प्रभाव जल्द पडता है। कुसंगति के संसर्ग में जो आता है उसे अपयश ही मिलता है। कुसंग इतना बुरा है कि यदि कलारिन (मदिरा बेचनेवाली) के घडे में दूध भी रखा जाय तो लोग उसे मदिरा ही समझते हैं। उदा -

> रहिमन नीचन संग बसि, लगत कलंक न काहि।
> दूध कलारी कर गहे, मद समुझै सब ताहि।।[४६]

"नीच व्यक्तियों का संग करने से कलंक लगता है। शराब बेचनेवाली के हाथ में दूध देख कर सब लोग उसे शराब ही समझते हैं। अच्छे लोग बुरे लोगों के साथ रहने लगे तो उन्हें भी नीच समझा जाता है।"

समय के बारेमें विचार :

रहीम समय की गति के बारेमें सावधान रहनेवाले व्यक्ति थे। उन्हें मालूम था कि समय अत्यंत बलवान है। कभी - कभी उनके जीवन का बिगडा काम प्रयत्न करने पर भी नहीं बन पाया। उदा -

रहिमन बिगरी आदि की, बनै न खरचे दाम।
हरि बढे आकाश लौं, तऊ बावनौ नाम।।[४७]

रहीम कहते हैं, "जो बात पहले गिड जाती है, वह फिर धन खर्च करने से भी नहीं मिलती। राजा बलि को छलने के लिए वामन का रुप धारण करने वाले भगवान छल के समय आकाश तक बढ गये फिर भी उनको वामन (छोटा) नाम से ही पुकारा जाता है।"

धन, संपत्ति, वैभव पुन: प्राप्त किया जा सकता है, परंतु गया हुआ समय वापस नहीं आता। इसलिए रहीम जीवन में समय को अधिक महत्व देते हैं।

कुसमय के बारेमें विचार :

समय की गति विचित्र होती है। आज जिनके पास करोंडों रुपये होते हैं, कल वे ही कौडी - कोडी के लिए तरसने लगते हैं। रहीम के पिता का यही हाल हुआ था। अच्छे समय में जो व्यक्ति साथ देते हैं वे ही कुसमय आने पर साथ छोड देते हैं। इस कुसमय के चंगुल में कौन नहीं फँसा ? स्त्री - पुरुष, सज्जन - दुर्जन, राजा - रंग सभी को इस चक्की में पिसना पडा है। अर्जुन, भीम आदि पांडवों को भी दुर्दिन सहने पडे हैं। उदा -

रहिमन दुरदिन के परे, बडेन किए घटि काज।
पांच रुप पांडव भए, रथवाहक नलराज।।[४८]

उपर्युक्त दोहे में रहीम कहते हैं। "बुरे दिनों में बडे व्यक्तियों ने भी छोटे काम किये हैं। पाँच पाँडवों ने अपने बुरे दिनों में अलग - अलग रूप धारण कर राजा विराट के यहाँ नौकरी की और राजा नल अपने बुरे दिनों में रथवाहक बने थे।"

साथ ही रहीम ने यह भी सुझाया है कि बुरे दिन आए तो भी व्यक्ति को निराश नहीं होना चाहिए। सामर्थ्य के साथ कुसमय पर मात करनी होगी।

रहीम के नीतिकाव्य में प्रकृति - चित्रण :

प्रकृति से तात्पर्य उन सभी वस्तुओं से हैं जो मानव निर्मित नहीं हैं। ये वस्तुएँ मनुष्य को अपने जीवन से पूर्व विद्यमान मिली थीं और उसके जीवन के पश्चात् भी विद्यमान रहेंगी। जैसे - नदी - पहाड, झील - झरने, पृथ्वी - आकाश, चांद - तारे, पशु - पक्षी, आदि। साहित्यकार इन प्राकृतिक उपकरणों का प्रयोग अपनी भावभिव्यक्ति में सदैव करते आये हैं। रहीम ने अपने काव्य में जो प्रकृति - वर्णन किया है वह परम्परागत हुआ है। नीति कथन में तो उनका प्रकृति चित्रण मौलिक है।

रहीम ने जिस प्रकार प्राकृतिक तत्वों का नीति विषयक इतना सधा हुआ प्रयोग किया है, उतना हिन्दी में अन्यत्र नहीं हुआ है। कभी तो वे प्राकृतिक घटनाओं अथवा तत्वों को देखकर उनसे नैतिक सिध्दान्त उपस्थित करते हैं। उनके समस्त नीति - काव्य में प्रकृति के विविध क्रियाकलापों को देखकर उनसे नैतिक सन्देश प्राप्त करना, रहीम के बुध्दि - वैभव का कमाल है।

बिना जड - मूल की अमर बेल को फैलते देख वे, सभी के पालन करनेवाले प्रभु का आश्रय अपनाने की प्रेरणा प्राप्त करते हैं। उदा -

> अमर बेलि बिनु मूल की, प्रतिपालत है ताहि।
> रहिमन ऐसे प्रभू तजि, खोजत फिरिए काहि।।[४९]

रहिम कहते हैं, "बिना जड की अमरबेल को पोषित करने वाले प्रभू को तज कर तू किसके आश्रय की खोज करता है ? तात्पर्य ऐसे शक्तिवान प्रभू को छोडकर कौन ऐसा है जो उनकी बराबरी कर सके।"

सूर्य - चन्द्रादि ज्योत पिण्डों को एक ही आभा से उदित एवं अस्त होते हुए देखकर उन्हें सुख - दु:ख में एक -सा बने रहने की स्मृति हो आती है। इस प्रकार न जाने कितने तथ्यों से इनके नीति -काव्य को लिखा गया है। उनके काव्य में अपना एक आकर्षण है जो मन पर चोट करता है। उदा -

मथत मथत माखन रहै, दही मही बिलगाय।
रहिमन सोई मीत है, भीर परै ठहराय।। [५०]

रहीम कहते हैं, " दही मथते - मथते मख्खन तो अलग हो जाता है और दही से मट्ठा अलग हो जाता है, उसी प्रकार वही मित्र है जो विपत्ति के समय भी साथ देता है, अलग नहीं होता।"

जैसे प्राकृतिक घटनाओं को देखकर उनसे नैतिक निष्कर्ष निकाले गये हैं उसी प्रकार अपने नैतिक निष्कर्षों के लिए प्रकृति को उदाहरण के रूप में प्रस्तुत किया है। छोटे - छोटे व्यक्तियों के उचित अनुचित कार्यों के पीछे बडों का हाथ रहा करता है। अपने पास धन - धान्यादि का सहारा होने पर ही मित्र रक्षा करते हैं। वैसे ही अंबु के बिना अंबुज का हित रवि भी नहीं कर पाता। उदा -

जब लगि वित्त न आपुने, तब लगि मित्र न कोय।
रहिमन अंबुज अँबु बिनु, रवि नाहिन हित होय।। [५१]

रहिम कहते हैं, "जब तक अपने पास धन नहीं है, तब तक कोई मित्र नहीं होता क्यों कि कमल को विकसित करनेवाला सूर्य भी पानी के सूख जाने पर उन्हें सुखा डालता है। उन्हें वह भी बचा नहीं सकता।"

विधाता द्वारा बडे बनाये हुए व्यक्तियों के दूषणों पर ध्यान न देकर, संसार उन्हें बडा ही समझता रहता है। चन्द्र दुबला - कुबडा होने पर भी नक्षत्रों से बडा गिना जाता है। उदा -

जे रहीम विधि बड किए, को कहि दूषन काढि।
चन्द्र दुबरौकूबरौ, तऊ नखत ते बाढि।।[५२]

रहीम कहते हैं, " विधाता ने जिनको बडा बनाया है, उनके दोष कौन निकाल सकता है ? चन्द्रमा दुबला और टेढा होने पर भी तारों से अधिक प्रकाश देता है। अर्थात् बडों-की त्रुटियों की ओर ध्यान तक नहीं देना चाहिए।"

जीवन मर्यादा के अनुकूल ही होना चाहिए। मर्यादा का उल्लंघन करते ही उसका विनष्ट होना स्वाभाविक है।

तेहि प्रमान चालिबो भलो, जो सब दिन ठहराइ।
उमडि चलै जाल-पार ते, जो 'रहीम' बढि जाई।।[५३]

रहीम कहते हैं, "व्यक्ति को मर्यादायुक्त आचरण करना चाहिए। जिस प्रकार नदी में होनेवाला पानी किनारों से बाहर निकलकर व्यर्थ नष्ट हो जाता है। उसी प्रकार मर्यादा का उल्लंघन करने से व्यक्ति का जीवन नष्ट होगा।"

प्रकृति-समर्थित उनके ये नीति - कथन इतने सरल, प्रभावशाली तथा प्रसिध्द हैं, जैसे -

जो रहीम उत्तम प्रकृति , का करि सकत कुसंग।
चन्दन विष ब्यापत नहीं, लिपटे रहत भुजंग।।[५४]

रहीम कहते हैं, "अच्छे स्वभाव के मनुष्य होते हैं उनको बुरी संगति भी बिगाड नहीं सकती। जैसे जहरीले सर्प चन्दन के वृक्षों से लिपटे रहते हैं, परंतु उनका असर चन्दन पर नहीं होता। वैसे ही कुसंग से अच्छे व्यक्तियों पर प्रभाव नहीं होता।"

साथ ही रहीम ने प्रभु - भक्ति, प्रभु - आश्रय सत्य - महिमा, दान - महिमा, दान का प्रभाव, सच्चे दानी, दान की विधि, दोहे का महत्त्व, याचना, याचकता आपत्काल में माँगना, माँगने से मानहानि, माँगना और उदार दानी, नारी, सती, कुल-वधू, कामातुरता, नृपति, राज्य अधिकारी, ममता, चिन्ता, मोह, मर्यादा, संगति, कुसंगति, दुर्जन का पडौस, दुर्जन - मंडली, में साधु की स्थिति, अंगार, मूर्ख, मूर्ख का ज्ञान, प्रेम, प्रेम का फिसलना, पथ, प्रेम की कसौटी, प्रेम में प्राणों की बाजी, प्रेम और प्रियतम, प्रीतम छबि और पर-छबि, धन, धन की आवश्यकता, धन की सुरक्षा, धन के दुर्गुण, लक्ष्मी का चांचल्य, अधिक धन-संग्रह, दीन और दीनबन्धु, बडे पेट का भरना, स्वार्थ, अनमेल का संग, स्वामी, सेवक, आत्मविश्वास, घमंड, आत्मगौरव, गोपनीय पदार्थ, बडों की संगति, क्षमा, असमय, समय का प्रभाव, नैन - बान, निर्धनता, भावी और कर्म, चातक, मीन, भ्रमर, गोत्र, शूर, जागीर, उत्तम प्रकृति, विषय - सुख, विवाह स्मृति, काल, विष आदि विषयों पर उन्होंने अपने दोहे लिखे हैं।

रहीम का प्राप्त नीति - काव्य विषय - निरूपण की दृष्टि से अत्यंत समृध्द है। उन्होंने दान - मान, सुसंग - कुसंग, सज्जन - दुर्जनादि कतिपय विवेचित विषय - परंपरा को आगे बढाते हुए, उसे धार्मिकता एवं शास्त्रीयता के वातावरण से मुक्त करके, क्रियात्मक जीवन के आधार पर व्यक्त किया है।

मध्ययुगीन नीति - काव्य की परंपरा में अधिकांश कवियों ने सामान्यत: कुछ ही विषयों पर काव्य रचना की है। जैसे - गुरू - महत्त्व, नाम-जप, नारी-निन्दा, ब्रह्मचर्य-महिमा, असार-संसार, ईश्वर-जीव, माया-ममता, क्षण-भंगुरता, विषय -त्याग आदि ऐसे ही विषय हैं। इन समस्त विषयों के निरूपण का महत्त्व धार्मिक रहा है। परंतु रहीम ने रामायण, महाभारत, पुराणादि की कथाओं तथा प्रभु विश्वास पर पूर्ण आस्था रखते हुए भी, अपने नीति - काव्य को धार्मिक संकीर्णता से मुक्त रखा है। यही कारण है कि वे नीति - काव्य को नवीन दिशा की ओर मोड देने में समर्थ हो सके। "उन्होंने अपने गंभीर शास्त्र - ज्ञान तथा विस्तृत लोकानुभव के आधार पर

विशुध्द व्यावहारिक विषय-विवेचन परिपाटी की स्थापना की तथा नीति-काव्य के धवल - प्रासाद को दैनिक जीवन की नींव पर खडा किया।"[५५]

निष्कर्ष :

रहीम का नीति - काव्य पढने से समझ में आता है कि वे निश्चित ही शास्त्रविद थे। उन्होंने सभी अन्य कवियों की भाँति इस ज्ञान का विनियोग अपने नीति - काव्य में किया है। रहीम ने प्रकृति के ही उदाहरण लेकर अपने नीति - काव्य का विवेचन किया है। इसी कारण उनके नीति के दोहे सदैव याद में रहते हैं।

रहीम ने जो अनुभव लिए उनका चित्रण उनके काव्य में दिखाई देता है। उनका नीति - काव्य अनुभवों का भंडार है। नीति में भी श्रृंगार का वर्णन सरलता से किया है। उनके श्रृंगार वर्णन में कहीं भी अश्लीलता दिखाई नहीं देती है। रहीम कुशल योध्दा थे, लेकिन उनके काव्य में वीर रस के उदाहरण कम मिलते हैं।

रहीम का पूरा काव्य नीति पर आधारित है। उनके काव्य-जीवन के सच्चे अनुभव देखने को मिलते हैं। उनके काव्य में धर्मनीति, अर्थनीति, कामनीति, मोक्षनीति के उदाहरण पढने को मिलते हैं। इतना ही नहीं रहीम ने अपने काव्य के जरिये अनेक विषयों का वर्णन किया है। उनके काव्य में श्रृंगार का वर्णन हुआ है वह भी मर्यादित है। रहीम ने जीवन में शांत भाव को अधिक महत्व दिया है। उन्होंने कहीं-कहीं पर विनोद भाव पर आधारित दोहे लिखे हैं। विनोद भाव की सहायता से अनमेल विवाह पर उन्होंने व्यंग्य किया है।

रहीम ने अपनी "दोहावली" रचना में गंगा नदी की स्तुति की है। रहीम कुशल योध्दा होने के कारण उनके काव्य में वीर रस के उदाहरण मिलते हैं। वे दान को अधिक महत्वपूर्ण मानते थे। दान -हीन जीवन उनकी दृष्टि से व्यर्थ था। उन्होंने अपने जीवन में जो संपत्ति मिली थी उसे दान में लुटा दिया। परोपकार करने को भी उन्होंने महत्व दिया है। सम्मान जहाँ मिलता है वहाँ जाने की उन्होंने

सलाह दी है। सत्संगति, समय का महत्व, लक्ष्मी चांचल्य पर उन्होंने विचार व्यक्त किए हैं। इतना ही नहीं प्रेम के बारेमें विचार व्यक्त करते हुए उन्होंने सच्चे प्रेम का वर्णन किया है। बुरे वक्त में जो सहायुयता करता है, वह सच्चा मित्र होता है। ऐसा उन्होंने कहा है। अपने विचार व्यक्त करने के लिए रहीम ने प्रकृति में से उदाहरण चुने हैं। इसी कारण नीति, श्रृंगार, तथा भक्ति के सीमित छन्दों में प्रकृति प्रेम, शास्त्रीयता, भाव सौन्दर्य एवं कला - कुशलता की सरल एवं सरस अभिव्यक्ति की दृष्टि से रहीम मध्यकुग के अद्वितीय कवि थे।

संदर्भ सूची

(१) रहीम के दोहे
प्रकाशक - लोंढे शंकरराव
तीसरा संस्करण, दोहा क्र. ७८, पृष्ठ सं. ८

(२) रहीम ग्रंथावली
संपा - मित्र विद्यानिवास
वाणी प्रकाशन, प्रथम संस्करण
दोहा क्र. २४८, पृष्ठ सं. १०३

(३) रहीम - सतसई
विश्वम्भर "अरूण"
प्रथम संस्करण, दोहा क्र. १५०, पृष्ठ सं. ८५.

(४) रहीम ग्रंथावली
समीर प्रकाशन, प्रथम संस्करण
दोहा क्र. १५०, पृष्ठ सं. ९२

(५) रहीम के दोहे
प्रकाशक - लोंढे शंकरराव
तीसरा संस्करण, दोहा क्र. २२५, पृष्ठ सं. २१

(६) रहीम - सतसई
विश्वम्भर "अरूण"
प्रथम संस्करण, दोहा क्र. १०, पृष्ठ सं. ४८

(७) रहीम - सतसई
विश्वम्भर "अरूण"
प्रथम संस्करण, दोहा क्र. २११, पृष्ठ सं. १२५

(८) रहीम-सतसई
विश्वम्भर "अरूण"
प्रथम संस्करण, दोहा क्र. २१२, पृष्ठ सं. १०३

(९) रहीम - सतसई
विश्वम्भर "अरूण"
प्रथम संस्करण, दोहा क्र. १४२, पृष्ठ सं. ८४.

(१०) रहीम ग्रंथावली
सम्पादक - मिश्र विद्यानिवास
समीर प्रकाशन, प्रथम संस्करण
दोहा क्र. १८०, पृष्ठ सं. ३५.

(११) रहीम - सतसई
विश्वम्भर "अरूण"
प्रथम संस्करण, दोहा क्र. १६, पृष्ठ सं. ४१.

(१२) रहीम के दोहे
प्रकाशक - लोंढे शंकरराव
तीसरा संस्करण, दोहा क्र. ५३, पृष्ठ सं. ५.

(१३) रहीम का नीतिकाव्य
डॉ. बालकृष्ण "अकिंचन"
अलंकार प्रकाशन, प्रथम संस्करण, पृष्ठ सं. १४६.

(१४) रहीम - सतसई
विश्वम्भर "अरूण"
प्रथम संस्करण, दोहा क्र. ४१, पृष्ठ सं. ५६.

(१५) रहीम - सतसई
विश्वम्भर "अरूण"
प्रथम संस्करण, दोहा क्र. ७१, पृष्ठ सं. ६५.

(१६) रहीम ग्रंथावली
सम्पादक - मिश्र विद्यानिवास
समीर प्रकाशन, प्रथम संस्करण
दोहा क्र. १२८, पृष्ठ सं. ९८.

(१७) रहीम के दोहे
प्रकाशक - लोंढे शंकरराव
तीसरा संस्करण, दोहा क्र. १४०, पृष्ठ सं. १३.

(१८) रहीम - सतसई
विशम्भर "अरूण"
प्रथम संस्करण, दोहा क्र. १ , पृष्ठ सं. ४५.

(१९) रहीम ग्रंथावली
सम्पादक - मिश्र विद्यानिवास
समीर प्रकाशन, प्रथम संस्करण
दोहा क्र. २२९, पृष्ठ सं. १०१ .

(२०) रहीम ग्रथावली
सम्पादक - मिश्र विद्यानिवास
समीर प्रकाशन, प्रथम संस्करण
दोहा क्र. २२५, पृष्ठ सं. १००

(२१) रहीम के दोहे
प्रकाशक - लोंढे शंकरराव
तीसरा संस्करण, दोहा क्र. १७, पृष्ठ सं. २

(२२) रहीम - सतसई
विश्वम्भर "अरूण"
प्रथम संस्करण, दोहा क्र. ७९, पृष्ठ सं. ६५.

(२३) रहीम - सतसई
विश्वम्भर "अरूण"
प्रथम संस्करण, दोहा क्र. ४०, पृष्ठ सं. ५६.

(२४) रहीम के दोहे
प्रकाशक - लोंढे शंकरराव
तीसरा संस्करण, दोहा क्र. १२३, पृष्ठ सं. १२.

(२५) रहीम के दोहे
प्रकाशक - लोंढे शंकरराव
तीसरा संस्करण, दोहा क्र. १५, पृष्ठ सं. २

(२६) रहीम ग्रंथावली
सम्पादक - मिश्र विद्यानिवास
प्रथम संस्करण, दोहा क्र. १३, पृष्ठ सं. ७८.

(२७) रहीम - सतसई
विश्वम्भर "अरूण"
प्रथम संस्करण, दोहा क्र. ४३, पृष्ठ सं. ५६.

(२८) रहीम - सतसई
विश्वम्भर "अरूण"
प्रथम संस्करण, दोहा क्र. ७०, पृष्ठ सं. ६३.

(२९) रहीम के दोहे
प्रकाशक - लोंढे शंकरराव
तीसरा संस्करण, दोहा क्र. १३३, पृष्ठ सं. १३.

(३०) रहीम - सतसई
विश्वम्भर "अरूण"
प्रथम संस्करण, दोहा क्र. ६३, पृष्ठ सं. ६२.

(३१) रहीम - सतसई
विश्वम्भर "अरूण"
प्रथम संस्करण, दोहा क्र. ९३, पृष्ठ सं. ७०.

(३२) रहीम ग्रंथावली
सम्पादक - मिश्र विद्यानिवास
प्रथम संस्करण, दोहा क्र. ४०, पृष्ठ सं. ८१

(३३) रहीम ग्रंथावली
सम्पादक - मिश्र विद्यानिवास
प्रथम संस्करण, दोहा क्र. ११५, पृष्ठ सं. १४१.

(३४) रहीम - सतसई
विश्वम्भर "अरूण"
प्रथम संस्करण, दोहा क्र. ५०, पृष्ठ सं. ५८.

(३५) रहीम ग्रंथावली
सम्पा - मिश्र विद्यानिवास
प्रथम संस्करण, दोहा क्र. २२, पृष्ठ सं. ११३.

(३६) रहीम - सतसई
विश्वम्भर "अरूण"
प्रथम संस्करण, दोहा क्र. ३९, पृष्ठ सं. ५६.

(३७) रहीम - ग्रंथावली
सम्पादक - मिश्र विद्यानिवास
प्रथम संस्करण, दोहा क्र. ११, पृष्ठ सं. १४५.

(३८) रहीम के दोहे
प्रकाशक - लोंढे शंकरराव
तीसरा संस्करण, दोहा क्र. १७८, पृष्ठ सं. १७.

(३९) रहीम - सतसई
विश्वम्भर "अरूण"
प्रथम संस्करण, दोहा क्र. २५६, पृष्ठ सं. ११६.

(४०) रहीम के दोहे
प्रकाशक - लोंढे शंकरराव
तीसरा संस्करण, दोहा क्र. २४९, पृष्ठ सं. २३.

(४१) रहीम - सतसई
विश्वम्भर "अरूण"
प्रथम संस्करण, दोहा क्र. ८०, पृष्ठ सं. ६६.

(४२) रहीम - सतसई
विश्वम्भर "अरूण"
प्रथम संस्करण, दोहा क्र. ९३, पृष्ठ सं. ७०.

(४३) रहीम - सतसई
विश्म्भर "अरूण"
प्रथम संस्करण, दोहा क्र. १३८, पृष्ठ सं. ८२.

(४४) रहीम के दोहे
प्रकाशक - लोंढे शंकरराव
तीसरा संस्करण, दोहा क्र. ७३, पृष्ठ सं. ७.

(४५) रहीम - सतसई
विश्वम्भर "अरूण"
प्रथम संस्करण, दोहा क्र. १५२, पृष्ठ सं. ८६.

(४६) रहीम ग्रंथावली
सम्पादक - मिश्र विद्यानिवास
प्रथम संस्करण, दोहा क्र. २१६, पृष्ठ सं. ९९.

(४७) रहीम ग्रंथावली
सम्पादक - मिश्र विद्यानिवास
प्रथम संस्करण, दोहा क्र. २२७, पृष्ठ सं. १००.

(४८) रहीम - सतसई
विश्वम्भर "अरूण"
प्रथम संस्करण, दोहा क्र. १६३, पृष्ठ सं. ८९.

(४९) रहीम के दोहे
प्रकाशक - लोंढे शंकरराव
तीसरा संस्करण, दोहा क्र. १७, पृष्ठ सं. २.

(५०) रहीम के दोहे
प्रकाशक - लोंढे शंकरराव
तीसरा संस्करण, दोहा क्र. १५३, पृष्ठ सं. १४.

(५१) रहीम ग्रंथावली
सम्पादक - मिश्र विद्यानिवास.
प्रथम संस्करण, दोहा क्र. ६२, पृष्ठ सं. ८३.

(५२) रहीम - सतसई
विश्वम्भर "अरूण
प्रथम संस्करण, दोहा क्र. १९०, पृष्ठ सं. ९७.

(५३) रहीम के दोहे
प्रकाशक - लोंढे शंकरराव
तीसरा संस्करण, दोहा क्र. ९८, पृष्ठ सं. ९.

(५४) रहीम-सतसई
विश्वम्भर "अरूण"
प्रथम संस्करण, दोहा क्र. १५२, पृष्ठ सं. ८६.

(५५) रहीम शतकत्रय
डॉ. बालकृष्ण "अकिंचन"
अलंकार प्रकाशन, प्रथम संस्करण.